ओ३म ।

वल्लभाचार्य्य और उनके पुष्टिमार्ग

-: अर्थात् :-

वैष्णवमतका

संक्षिप्त इतिहास

-: और :-

गुसांइयोंकी लीलायें

सम्पादक व प्रकाशक—

गोविन्दराम, अध्यक्ष

"सुलभ साहित्य-प्रचारक कार्य्यालय"

नं० २१२ बहबाजार स्ट्रीट, कलकत्ता ।

प्रथमवार १०००] अक्टूबर १९१७ [मूल्य ।) आने ।

वल्लभाचार्य्य और उनके पुष्टिमार्ग

अर्थात्

वैष्णवमतका

संक्षिप्त इतिहास ।

भारतके दक्षिण दिशामें तैलंग प्रदेश है, अनेक विद्वानोंका मत है कि, जब आर्य्यलोग अपने आदि स्थान, तिब्बतसे यहाँ आये उस समय यहाँ अनार्य्य लोगोंकी बस्ती थी, उनकी भाषा भी आष्ट्रेलियन भाषासे मिलती जुलती थी, जिसको द्राविड़ी भाषा भी कहते हैं। आज भी मदरास प्रदेशमें बहुधा द्राविड़ी तामिल, तैलंगी, तुलुव आदि भाषायें बोली जाती हैं जो कि भारतवर्षके किसी प्रदेशकी भाषासे नहीं मिलतीं, किन्तु भारतकी अन्यान्य सब भाषायें यथा— कृत, हिन्दी, बंगला, मराठी, पंजाबी, सिन्धी, मारवाड़ी गुजराती, कच्छी, विहारी, उड़िया आदि परस्पर बहुत मिलती हुई हैं, तथा मदरास प्रदेशके लोगोंके रीतिरिवाज भी हम आर्य्य-हिन्दुओंसे नहीं मिलते,

आकृतिमें भी मदरास प्रदेशके आदमी हमसे भिन्न आफ्रिकादि लोगोंके तुल्य काले रंगके होते हैं।

मिस्टर म्यूर नामक किसी अंग्रेजने अपनी पुस्तक में लिखा है कि—

The old Sanskrit Literature proves that the Aryan population of India came in from the North west. India was already peopled by a dark complexed peoples more like the Australians than any one else, and speaking a group of Languages called Dravedian.

गोंसाइयोंके पूर्वज भी इसी अनार्य्य तैलंग जातिके हैं। तैलंग देशके काकड़वाड़ नामक ग्राममें यज्ञ नारायण भट्ट नामक तैलंग ब्राह्मण रहता था, उसके कुलमें लक्ष्मण नामक एक लड़का हुआ। लक्ष्मण विवाह कर किसी कारणसे माता पिता और स्त्रीको छोड़ काशीमें जाके एक सन्यासीसे कि मेरा कोई नहीं है झूट बोलकर सन्यास ले लिया। दैवयोगसे उसके मातापिता और स्त्रीने सुना कि लक्ष्मण काशीमें सन्यासी हो गया है, उसके मातापिता, स्त्रीको ले काशीमें पहुंचे और जिसने उसको सन्यास दिया था, उससे कहा कि, इसको सन्यासी क्यों किया है? देखो! इसकी युवती स्त्री है, और स्त्रीने भी कहा कि, यदि आप मेरे पतीको मेरे साथ न करें तो

मुझको भी सन्यास दे दीजिये ; तब तो साधुने लक्ष्मण को बुलाके कहा कि, तू बड़ा मिथ्यावादी है, सन्यास छोड़ गृहस्थी हो क्यों कि तूने झूठ बोलकर सन्यास लिया है, लक्ष्मणने पुन: वैसाही किया, सन्यास छोड़ माता पिता और स्त्रीके साथ हो लिया। देखिये इस मतका मूल ही झूठ कपटसे चला। तब तैलंग देशमें गये, उसको जातिमें किसीने न लिया, क्यों कि, सन्यासी होकर गृहस्थी बनना शास्त्र विरुद्ध है। जबतक माता पिता जीते रहे लक्ष्मण देशमें ही रहा; पश्चात् स्त्रीको लेकर काशीमें आ रहा और भिक्षावृत्तिसे गुजरान करने लगा। काशीमें लक्ष्मणके घर प्रथम पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम रामकृष्ण रक्खा, लड़का जब कुछ बड़ा हुआ तब पैसोंकी तंगी वा पालन पोषणकी अशक्यताके कारण उसको एक गिरि साधुको बेच दिया वा दे दिया।

कुछ कालके बाद काशीमें मुसलमानोंकी लड़ाईका बखेड़ा आरम्भ हुआ। सब लोग काशीसे जहां तहां भागने लगे, और लक्ष्मण भट्ट भी जिसको गुसाइयोंके पुस्तकोंमें श्रीवासुदेवका अवतार लिखा है अपनी स्त्री इल्लमागारु जिसके पेटमें "पूर्ण पुरुषोत्तम वल्लभ" था वह भी अपना इल्लम दिखाये बिना ही दोनों स्त्री पुरुषको भागना पड़ा। भागते हुए मार्गश्रमसे चम्पारण्यमें

इल्लमागारुके पेटमें वेदना होकर सात मासका कच्चा बच्चा स्रवित हो गया। बच्चे को लपेट कर किसी वृक्षके नीचे गाड़कर चतुर्भद्रपुर ग्राममें जा निवास किया।

काशीमें जब खलबली शान्त हुई। भागे हुए सब काशीको लौटने लगे। लक्ष्मण भी स्त्री सहित काशीको रवाना हुआ। रास्तेमें पुनः जब चम्पारण्यमें पहुंचे तो जंगलमें एक स्थानपर चारों ओर आगी जल रही थी बीचमें एक लड़का पड़ा हुआ था, लक्ष्मण और उनकी स्त्री निकट जाकर लड़केको उठा लिया, पुष्टि मार्गके "मूलपुरुष"में भी लिखा है कि "अग्नि चहुंधा-मध्य बालक देखि सन्मुखधावही।" यह घटना सम्वत् १५३५ के वैशाख वदि ११ रविवारको है।

यही लड़का आगे जाकर वल्लभाचार्य्यके नामसे प्रसिद्ध हुआ।

यहां स्वभाविक प्रश्न उत्पन्न होता है कि, वह बालक किसका था? वहां जंगलमें चारों ओर आगी जलाकर कौन छोड़ गया था? क्यों छोड़ गया था?

गुसाइयोंके पुस्तकोंमें लिखा है कि यह वही लड़का था जिसको लक्ष्मणकी स्त्री इल्लमागारु मरा हुआ समझ कर दबा गई थी और लक्ष्मणके पूर्वज यज्ञ नारायण भट्ट ने १०० सोम यज्ञ करनेकी प्रतिज्ञा की थी, सो वह लक्ष्मणके समयमें पूरे हुए और लक्ष्मणको आकाशवाणी

हुई कि, तुम्हारे वंशमें सौ सोमयज्ञ पूर्ण हुए हैं, इस लिये तुम्हारे यहां भगवत् अवतार होगा। अतः जो लड़का लक्ष्मणको चम्पारण्यमें अग्निमें से मिला था वही भगवत् अवतार था।

समीक्षा—लक्ष्मणके पूर्वज यज्ञ नारायणने सौ सोम यज्ञ करनेकी प्रतिज्ञाकी और लक्ष्मणके समयमें वह पूरे हुए, भला सोचो तो सही, कि लक्ष्मण और उनके पूर्वज ब्राह्मण थे और ब्राह्मण वृत्तिसे ही अपना गुजारा करते थे; उनके यहां इतना धन कहां कि सौ सोम यज्ञ पूरे करते। प्राचिन कालमें जिसको राजे महाराजे भी मुश्किलसे एक सोम यज्ञ पूर्ण करते थे उसको इन भीख मंगोंने एक नहीं सो सोम यज्ञ पूरे किये; कौन विश्वास कर सकता है? और सौ सोम यज्ञ करे उसके यहां भगवत् अवतार होता हो तो बड़े बड़े चक्रवर्ती राजे अनेक कष्ट सहकर सौ नहीं हजारों सोम यज्ञ करते; किन्तु यह गप्प ही समझिये। और वल्लभ यदि भगवत् अवतार ही था तो अपनी मा इल्लमागारूके गर्भमें अपनी रक्षा क्यों नहीं की? क्यों बीचमें ही स्रवित हुआ और मा को कष्ट दिया?

विज्ञान और सृष्टि नियमके अनुसार विचार किया जावे तो कहना पड़ेगा कि, वल्लभ भगवत् अवतार तो क्या एक साधारण मनुष्यसे भी गिरा हुआ

था ; इल्लमागारू तो अपने कच्चे बच्चे को मरा हुआ समझ कर गाड़ गई थी। कागीमें लड़ाई बन्द होनेसे लौटनेमें लक्ष्मण तथा उसकी स्त्रीको अवश्य कुछ मास बीते होंगे इतने मास पर्य्यन्त वह बच्चा जीता रहे यह असम्भव है उसके मा बाप चारों ओर आगी जलाकर नहीं छोड़ गये थे ; इत्यादि बातोंपर विचार करनेसे प्रतित होता है कि यह बच्चा और ही किसीका था अनुमान किया जा सक्ता है कि, वह बच्चा किसी विधवा वा कुलटाका होगा जिसका गर्भ पापकर्म्म अर्थात् व्यभीचारसे रहा होगा, और उस व्यभीचारिणी स्त्रीने बच्चेको पैदा होते ही निर्जन स्थानमें छोड़नेके लिये अपने अनुचरको दिया होगा, और छोड़नेवाला चारों ओर आगी इसलिये जलाकर छोड़ गया होगा कि, इसको कोई हिंसक जन्तु न खाले तथा बच्चेके नसीब अच्छे होवें तो कोई रस्ते जाते हुए मनुष्यको नजर पड़नेसे इसको उठाले, वल्लभके भाग्यसे लक्ष्मण और उसकी स्त्री वहांसे निकले और बच्चेको देख उठा लिया क्यों कि, एक बच्चा नष्ट हो ही चुका था इस मोहसे भी उठा लिया होतो कोई आश्चर्य नहीं। अब पाठक स्वयं विचार कर लेवें कि वल्लभ इल्लमागारूके पेटसे पैदा हुआ भगवत् अवतार था वा किसी कुलटा विधवा नारीका व्यभीचारसे पैदा हुआ हुआ मामुली मनुष्य था।

लक्ष्मण अपनी स्त्री और बालक वल्लभ सहित काशीमें आये। कुछ वर्षोंके पश्चात् लक्ष्मणकी इल्लमा गारूके गर्भसे और एक बालक उत्पन्न हुआ उसका नाम केशव रक्खा, केशव भी जब कुछ बड़ा हुआ तो उसको भी प्रथम पुत्र रामकृष्णकी तरह पुरी साधूके हाथ बेचा अथवा दे दिया।

वल्लभ जब ११ वर्षको अवस्थाका हुआ उनके पिता लक्ष्मणका शरीर छूट गया। काशीमें बाल्यावस्थासे युवावस्थातक कुछ पढ़ता भी रहा। फिर कहीं जाके एक विष्णु स्वामीके मठमें सन्यास लेकर चला ही गया, गुरुके पश्चात् वल्लभ ही उस गद्दीपर बैठा, फिर कुछ वर्षोंके पश्चात् कुछ शिष्यों सहित यात्रा करने निकले। काशीमें भी पधारे। काशीमें वैसा ही एक जाती पतित ब्राह्मण रहता था उसकी एक युवती कन्या थी, उसने वल्लभकी यौवनावस्था देखकर कहा कि यदि तू सन्यास छोड़े तो मैं अपनी कन्या तुमसे व्याह दूँ। वल्लभने यह सोचकर कि मेरी युवावस्था है, तथा मुझे कन्या भी कौन देगा; झट स्वीकार कर सन्यास त्याग उसकी कन्यासे विवाह कर लिया। जिसके बापने ऐसी लीला की थी वैसी ही पुत्र क्यों न करे!*

---

*आज भी भारतवर्षमें ६०-७०के करीब गुसाईंलोग

आरम्भोन्याययुक्तो यः सहि धर्म्म इति सम्मतः।
अनाचारस्त्वधर्मेति एकच्छिष्टानुशासनम्॥

अर्थात्—बुद्धीमान लोग कहते हैं कि जिसका आरम्भ न्याययुक्त हो वह धर्म्म है और जिसका आरम्भ ही अनाचारसे है उसको अधर्म्म समझो।

विवाह और बालाकर जब वल्लभ अपने विष्णुस्वामी के मठमें गया, वहां शिष्योंने वल्लभको स्त्री सहित देख आश्चर्य प्रकट किया, और सबने मिलकर वल्लभसे कहा कि इस मठके महन्त सदासे सन्यासी हो होते आये हैं अतः गृहस्थी नहीं हो सके। इसपर खटपट आरम्भ हुई और अन्तमें वल्लभको वहांसे अलग होना पड़ा।

विष्णुस्वामीके मठमें रहकर वल्लभने मठ चलानेकी विद्या तो अच्छे प्रकार सीख ही लीथी। अतः वहांसे अलग होकर प्रयागके निकट अड़ैल नामक ग्राममें आकर अपना नया मत वैष्णवमतान्तर्गत पुष्टि मार्गके

है वे सब तैलंग भट्ट जातिसे बाहर हैं कोई इनलोगोंसे रोटी बेटीका व्योहार नहीं रखता ये आपसमें ही लेते देते हैं। जब आपसमें नहीं मिलती तब खूब धन देकर तैलंग देशसे किसी ग़रीबकी कन्या व्याह कर लाते हैं। और वह लड़की देनेवाला भी जाति बाहर कियां जाता है।

नामसे चलाया, समयके प्रभावसे उन दिनों भारतमें अविद्याकी घटा टोप अंधेरी छा रही थी और इन्होंने सब जातिके पुरुष और स्त्रीयोंको कण्ठी बांध वैष्णव हो जानेका अधिकार दे दिया। वल्लभाचार्य्यके सारे जीवनमें कुल ८४ वैष्णव ने जो कि "चौरासी वैष्णवों की वार्ता" नामक पुस्तकमें वर्णित हैं। और वल्लभा-चार्य्यके द्वितीय पुत्र विठ्ठलनाथ जी (जो गुसांईजी के नामसे प्रख्यात हुए) ने अपने शिष्योंमें मुसलमान भंगी, चमार, नापी सबको शिष्य बनाना आरम्भ किया। इनके भी २५२ शिष्य (सारे जन्ममें) बने जो कि, २५२ वैष्णवोंकी वार्ता नामक पुस्तकमें वर्णित हैं।

वल्लभके पश्चात् उनके पुत्र और पोतोंने अनेक चाल बाजी और युक्तियोंसे व्रज, गुजरात, मारवाड़ तथा अन्य स्थानोंमें अपने मतको फैलाया। वल्लभाचार्य्यके पौत्र गोकुलनाथजीने सिधान्त रहस्य आदि पुस्तकोंकी टीका करके अपने बाप दादोंके सिधान्तोंको स्पष्टकर दिया। तथा खान, पान, और व्यभीचार आदि बातें अपने मतमें प्रवेश कर पुष्टि मार्ग (जिसका अर्थ भी खान पान और स्त्रियोंसे खूब व्यभीचार करना होता है) का पूर्ण रूपसे प्रचार किया।

इसके पश्चात् गोस्वामीयोंने अपने धर्मके ग्रन्थ खूब अनीतिको बढ़ानेवाले तथा अपने स्वार्थके साधनेवाले

वनाये जिनका पूरा और सच्चा हृत्तान्त आपको "महाराज लायबल केस" की रिपार्टमें मिलेगा। यहां हम सिर्फ कुछ महानुभवोंकी सम्मतियें उद्धृत करते हैं।

सन् १९११ की सरकारी रिपोर्टमें लिखा है कि :—

"Sin of all kinds is washed away by a union with god; Krishna is the refuge of all, and to the holy Krishna man must dedicate his all. The scandal which has attached itself to the name of the sect is due to the development of this doctrine, apparently in the time of Gokul Nath. The Gosain is identified with the divinity. By the act of dedication a man submits to the pleasure of the Gusain as God's representative, not only his worldly wealth but the virginity of his daughter or newly married wife. Under this teaching, the Vallabhacharyas have become the epicureans of the East, and are not ashamed to avow their belief that the ideal life consists rather in social enjoyment than in solitude and mortification. Members of the sect are invari-

ably family men and engage freely in secular pursuits."

(Muttra Gazetteer of 1911 by Mr. D. L. Drake Brockman, I. C. S.)

अर्थ:—सब प्रकारके पाप ईश्वरके साथ मेल होनेसे धुल जाते हैं; कृष्ण सबके शरणाधार हैं उस पवित्र कृष्णपर मनुष्योंको अपना सर्वस्व समर्पण करना चाहिये, इस सिद्धान्तके प्रचारित होनेपर इस सम्प्रदायके नाम-पर ऐसे घोर अत्याचारका लगाव हो गया है; प्रतीत होता है कि गोकुलनाथके समयसे इसका प्रचार हुआ है गुसाईको ईश्वर समझा जाता है, गुसाईको ईश्वरका प्रतिनिधि समझकर उसके आनन्दके लिये मनुष्य केवल अपने सांसारिक धन ही को उसके लिये समर्पण नहीं करता किन्तु अपनी पुत्री तथा नव विवाहिता स्त्रीके कुंवारेपनको भी न्योछावर करता है अर्थात् विवाहा-नन्तर पुत्री और स्त्रीको सम्भोग करनेके लिये समर्पण करता है। इस शिक्षाकी आड़में वल्लभाचार्य्य लोग पूर्वदेशके "एपीक्यूरियन" हैं * और इस सिद्धान्तके घोषणा करनेमें उन्हें लज्जा नहीं आती, कि "आदर्श

---

* यूरोपके ग्रीस देशमें एपीक्यूरस नामक एक दार्शनिक हुआ है उसके चलाये हुए मतके अनु-यायियोंको "एपीक्यूरियनस्" कहते हैं; उनका सिद्धान्त

जीवन भोग विलासमें है; न कि, एकान्त वास तथा इन्द्रिय विग्रहमें।" इस सम्प्रदायके सभासद प्रायः सभी गृहस्थ हैं, तथा वे स्वतन्त्रतापूर्व्वक सांसारिक भोगोंको प्राप्तिकी चेष्टामें रत रहते हैं।"

सरकारी रिपोर्टरकी उक्त बातें निम्न एक लेखसे भी पुष्ट होती हैं। यह लेख "पुष्टि मार्ग" गुजराती ग्रंथसे उद्धृत किया है।

था कि Eat drink and be merry अर्थात् खाओ पीओ और मौज करो।

प्राचीन कालमें यहां भारतवर्षमें भी चारवाक् यही प्रचार करता था कि;

यावज्जीवेत्सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत्।

भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः॥

जब लग जीवे सुखसे जीवे धन न हो तो ऋण लेकर भी घृत पीवे अर्थात् आनन्द करे मृत्युके बाद देह तो भस्म जावेगा फिर आना जाना किसका कौन किससे लेगा और देगा।

वलभाचार्य्य मतके गुसाई भी परलोककी सुध बुध विसारकर इसी मतका अनुकरण करने लगे हैं। जैसे सभ्य जगत् एपीक्यूरियनोंको तथा चारवाक को निन्दते हैं वैसे ही जब इन गुसाइयोंकी लीलाओंका उनको पता लगेगा तब इनको भी निन्देंगे।

"गोपालदास करके एक आदमी गुसांईजी तथा गोकुलनाथजी की खवासीमें था। उसने एक पुस्तक "पाखण्ड प्रकाश"के नामसे बनाई थी। उसकी भूमिका में उसने लिखा है कि, "मैं पुष्टिमार्ग नामके पन्थमें तीस वर्षतक रहा, दस वर्ष गुसांईजी की खवासीमें और बीस वर्ष गोकुलनाथजीकी खवासीमें बिताये। गुसांईजी जाहिरमें तो व्यभीचार नहीं करते थे; किन्तु गुप्त रीतिसे अवश्य करते थे। गोकुलनाथ जी तो आमतोरपर व्यभीचारी थे। (फिर लिखा है कि) मैं भी उनके साथ पाप कर्म करनेमें कोई कसर नहीं रखता था। मैं ४५ वर्षका हुआ तब एक स्थान पर कथा हो रही थी, वहां श्रवण करने बैठा, वहां व्यभीचारका अतिशय निषेध पढ़ा गया, जिसे सुन मुझे मेरे कृत्यका विचार हुआ। फिर कथा सुननेका मैंने नित्य नियम रक्खा। इससे सत्य सार जाननेपर मैंने अपने पूर्वोक्त कर्मोंका पश्चाताप कर इस मतको नौगजका नमस्कार किया। फिर अल्प दिनोंके बाद मैं संन्यासी हो गया। और परमात्माको जाननेका विचार किया। एक दिन महाभारतका पुस्तक पढ़ रहा था; उसमें एक स्थानपर आया कि, "कोई भी आदमी किसी धर्ममें अधर्म मिला हुआ जानता हो और वह जाहिर न करे तो उसको ब्रह्महत्याका महापाप लगता है।"

फिर लिखा है कि "इस पर मुझे मेरे पुराने मित्रों गुसाइयोंके हाल याद आये और विचार किया कि, अधर्म मिला हुआ हो उसको न कहनेमें ब्रह्महत्याको पाप लगता है। तब इन लोगोंमें तो धर्मके नामपर खुल-मखुला घोर अधर्म वर्तरहा है। यह बात जो मैं लोगोंको न बताऊं तो मुझको ब्रह्महत्यासे भी अधिक पाप लगे।" इस लिये यह ग्रन्थ अपने उपरसे पाप छुड़ानेके लिये लिखा है।" उस पुस्तकमें गुसाई जी क्या क्या करते थे उनकी लीलायें भले प्रकार लिखी है।

इसके अतिरिक्त कलकत्तेकी बेंगाल एशीयाटिक सोसाइटीके १६वें वोल्यूममें वल्लभाचार्य्यके मत विषय में जो छपा है उनमेंसे कुछ लेख यहा भी उद्धृत किया जाता है।

"वल्लभाचार्य्यने जो नया मार्ग चलाया उसमें जो बातें लिखी वे अन्य मतवालोंसे बहुत भिन्न और नये प्रकार की हैं, उसने अपने मतके लोगोंको बताया कि तप करके तथा कष्ट भोगके ईश्वरको भजनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। इस मतके गुरु और शिष्योंने ठाकुरजीकी सेवा सुन्दर वस्त्र पहिनाके तथा भांति भांतिके पकवान बनाके और संसारके भोग विलास अर्थात् शृंगार भावसे करनी। ये गुरु अधिकांश कुटम्बवाले

होते हैं। वे सबसे अच्छे और सुन्दर वस्त्र पहिनते हैं। और अपने शिष्योंपर वे बेहद हुकूमत चलाते हैं, और वे शिष्यगण उनको भांत भांतके पकवान (मिष्टान) खिलाते हैं। वे अपने शिष्योंको तीन वार समर्पण देते है, और उस समर्पणके लिये उनके शिष्य लोग अपना तन, मन और धन अपने गुरु अर्थात् गुसाईयोंको अर्पण करते हैं;......इस मतके लोगोंके विचारानुसार गुसाईजी महाराजोंको जो मान दिया जाता है वह केवल उनकी पवित्रता और विद्याका कुछभी विचार किये बिना ही वंशपरम्पराके कारण दिया जाता है। वे बहुत करके कुछ भी मानके योग्य नहीं है। तथापि उनके शिष्यवर्गसे उनको कुछ कम मान नहीं मिलता।"

गोस्वामीयेंाको ढोंगकी पोल खोलनेवाले भारत प्रसिद्ध स्वर्गीय स्वामी ब्राकटानन्दके नामसे कौन विद्वान परिचित नहीं है। उन्होंने अपने पुस्तकमें लिखा है कि :—

"हमारे घरानेके पूर्वज इसी सम्प्रदायके शिष्य होते आते थे उसी रीतिके अनुसार मैं भी बाल्यावस्थाहीमें इसी सम्प्रदायका शिष्य हुआ और कई महाराजों अर्थात् गोसांईयोंके पास सेवामें भी रहा और इनकी बाहर भीतर की समस्त प्रकाश्य व गुप्त लीलायें देखी

और भोले शिष्योंसे रुपये कमानेके उतार चढ़ाव भी भली भांति देखे जब देखते देखते मनका घड़ा अच्छी तरह भरकर उभरने लगा अर्थात् इन महाशयोंके कौतुक देखें न गये और वच्चसा हृदय भी त्राहि त्राहि करने लगा तब अंतको जीमें महा घृणा उत्पन्न हुई और विचार किया कि इस सत्सङ्गको विना विसारे तुम्हारा लोक परलोक कदापि नहीं सुधर सका निदान उसी क्षणसे सब त्यागकर चित्तमें वैराग्यका स्थापन किया एक दिन निरद्वंद्वता पूर्वक ब्रजकी लतापतामें भ्रमण करते करते इस पन्थके भोले अनुयायी एवं अज्ञान सेवक (शिष्य) लोगों (जो मृगतृष्णावत केवल कल्याणके धोखें ही धोखेमें अपने धन धर्मका नाश करते हैं) की सोचनीय दशा पर ध्यान आया तो मनको अति खेद एवं चित्तोत्ताप हुआ इसी अवसरमें एक आकस्मिक भगवद् प्रेरणा हुई कि संसारमें दो प्रकारके लाभ हैं स्वोपकार और परोपकार मनुष्योंको दोनों लाभोंका साधन अवश्य है जिस तरह तूने अपने स्वार्थसाधक मनुष्य जन्मको इन गोमुख व्याघ्रोंसे बचाया है उसी प्रकार अन्य अज्ञान संसारी जीवोंको भी सावधान करके इनकी घातसे बचा। इस लिये संसारी लोगोंके उपकारार्थ इन लोगोंकी कुछ प्रकाश्य वार्ताएं प्रगट करनेका भार अपने शिरपर उठाकर यह

पुस्तकें निर्मित की है।"

स्वामी ब्लाकटानन्दजीने निम्न तीन पुस्तकें (१) वल्लभकुल छल कपट दर्पण (२) वल्लभकुल दम्भदर्पण नाटक (३) वल्लभकुलचरित्रदर्पण, प्रकट कर गुसाइयों के उन गुप्त कुकर्मों को प्रगट किया है कि, उनको पढ़कर रोमाञ्च खड़े हो जाते हैं, गुसाइयोंके प्रति घृणा आये बिना नहीं रहती। उसमें सप्रमाण कई गुसाइयोंके नाम व पते देकर बताया है कि ये गुसाई लोग न सिर्फ अपने शिष्योंकी ही बहु बेटियोंसे व्यभिचार करते हैं अपितु अपनी बहिन व माताओंसेभी गुप्त सम्बन्ध अर्थात् व्यभीचार करते हैं। जिसमें वर्त्तमान नाथद्वारेके टिकेट गोवर्द्धनलाल जी महाराजका नाम भी आया है। इसके अतिरिक्त वेश्याओंका नाच वेश्याओं से सम्बन्ध तो मानो गुसाइयोंमें कुल परम्पराकी रीति है। अनेक गुसाइयोंके जनाना वेश धारण कर नाच रंगकी भी सचित्र बातें प्रगट की हैं। स्वामी ब्लाकटानन्दकी ये सब बातें सच्ची हैं वह इस बातसे साबित होती हैं कि स्वामी ब्लाकटानन्दने उपरोक्त तीनों पुस्तकोंकी अनेक आवृत्तियां अपने हाथसे छपाई, उनके जीवित अवस्थामें किसी गुसाईने उनपर कोई मुकदमा नहीं चलाया।

एक साधारण मनुष्यके विषयमें तो कोई झूठी

बातें लिख नहीं सक्ता तो ऐसे बड़े गुरुओंके विषय-में कौन लिखेगा जो धनी हों और लाखों आदमीयोंके गुरु हों। गोवर्द्धनलाल जी महाराज बड़े धनी हैं, नाथद्वारके राजा हैं, ३५ गांव इनके अधीन हैं, लाखों रुपयोंकी वार्षिक आय होनेके अतिरिक्त लाखों मनुष्यों के ये धर्म्म गुरु हैं। इनके विषयमें कौन झूठी बातें लिख सक्ता है। स्वामी बुलाकटानन्दने इनके तथा अन्य गुसाइयोंके विषयमें जो कुछ लिखा है वह इस बातसे भी सच्ची मालुम होती हैं कि, गोवर्द्धन लालजीने उनपर न्यायकी अदालतमें तो मुकदमा नहीं किया परन्तु घर ही घरमें बहुत चेष्टा की कि बुलाकटा-नन्द जी इन पुस्तकोंका प्रचार न करें। इस आशयसे एक चिठी गोस्वामी श्री गोवर्द्धनलाल जी महाराजकी आज्ञासे उनके भण्डारीने स्वामी बुलाकटानन्दको लिखी थी वह यहां प्रकाशित करते हैं जिस्को स्वामी बुलाकटा-नन्दजीने अपनी पुस्तकमें प्रकाशित की है।

नकल चिट्ठी

श्रीनाथजी।

"स्वस्ति श्री सर्वोपमा स्वामी बुलाकटानन्दजी जोग लिखी इलाहाबादसे भण्डारी हर बिलासरायके भगवत् स्मरण बांचोगे अपरंच मैं यहां खास तुमसे मिलनेके-वास्ते आया हूं और अहियापुरमें मन्दिर गोवर्द्धन

नाथजीमें ठहरा हूं। श्री टीकैट श्री १०८ गोवर्द्धनलाल जी महाराजनें मुझे भेजा है कि, तुमने यह तीन पुस्तकें छापी है नीचे मुजब १ वल्लभकुल चरित्र, २ वल्लभकुलदम्भदर्पण, ३ वल्लभकुलछल कपट दर्पण, इन कुल बातोंका भेद हमारे महाराज तथा अन्य स्वरूपोंका तुमको किसने दिया है? धर्मसे कहो क्योंकि तुम हमारे मित्र हो, अगर यह फर्ज कर लिया जाय कि यह बातें सत्य भी हों तो यह बातें गुरु घरानेकी तुमको लिखना उचित नहीं थी खैर आदमीसे भूल होही जाती है अब आप कृपा करके उन लोगोंके नाम लिखिये जिन्होंने यह गुप्त चरित्रोंका भेद दिया है और अब यह भी लिखिये कि आपकी मनशा क्या है, हम सब बातमें तैयार हैं, हमारे महाराजकी आज्ञा है।"

"मिती मागशिर शुदि ४ सं० १९६४।

द० भण्डारी हरिविलासराय।

(साक्षी) जो भण्डारीजीने कामकी प्रेरणा की है उसमें हमारी सम्मती है।

द० मथुराप्रसाद पुजारी।"

इस पत्रके उत्तरमें एक प्रार्थना पत्र गोवर्द्धनलालजी महाराजकी सेवामें स्वामी ब्रह्मानन्दजी महाराजने भेजा उसका आशय यह है :—

"आप और समस्त वल्लभकुलके भूषण स्वरूप निम्न-लिखित बातोंके माननेकी प्रतिज्ञा करें तो मैं अपनी समस्त पुस्तकोंको मट्टीके तेलमें भिगोके भस्म कर दूं, अथवा आप स्वयं जिस तरह चाहें मेरे सामने उन्हें भस्मीभूत कर सकते हैं। आपके कई लाख चेले इस भारतभूमिमें हैं वह चाहें इससे धर्मका सम्बन्ध रखते हैं, किन्तु न्याय दृष्टिसे सर्व्वसाधारणकी सम्मति इसके विरुद्ध है।

(१) चेलियोंको पुत्रियोंके समान समझ कर धर्म व्यवहार रखना।

(२) विवाहोंमें वेश्याओंका नृत्य कराना बन्द कर दीजिये क्योंकि इस नीच कर्मको शूद्रादिकोंनेभी उठा दिया है; यह गोवधका सहायक है।

(३) स्त्री पुरुषोंको मर्याद देना अर्थात् एक दूसरेके हाथका स्पर्श किया अन्न खानेका निषेध करना घरमें फूट कराना है, इसे बन्द कीजिये। क्योंकि स्त्री पुरुषों—पति पत्नियोंमें सह भोजको बन्द करना बड़े अनर्थकी बात है, और यह सम्प्रदायके सिद्धान्तोंके विरुद्ध है, बीचको घड़ी हुई मर्याद है श्री महाप्रभुजीके वचन नहीं हैं।

(४) शिष्यों व सेवकोंको उच्छिष्ट भोजन देना यह वाममार्गका अनुकरण है जो वैष्णवमार्गके सर्वथा

विरुद्ध है। इन चारों बातोंसे सम्प्रदायकी बड़ी ही निन्दा हो रही है और इसी निन्दाको असह्य और दुःख समझ सेवकने चितावनेके निमित्त उक्त पुस्तकें छपाई थीं। लेकिन वह सेवा मेरी सर्व निष्फल हुई सो यदि अब देशोद्धारके समयमें इनको परित्याग कर देवेंगे तो, आपका यश दुनियामें रहेगा, मैं जिस प्रकार उलटी चेतावनीसे सम्प्रदायका सुधार करना चाहता था अब सीधीचेतावनीसे सुधार करनेका प्रयत्न करूंगा और बड़े बड़े विद्वान आपकी प्रशंसा करेंगे और मैं सब झगड़ोंको तिलांजली देकर भगवत् भजन करूंगा क्यों कि इस राजकथासे कुछ मतलब नहीं है जो कुछ प्रशंसा जप तप आधारकी है वह गोस्वामी श्री १०८ रणछोड़लालजीकी है वही परिपाटी आप करिये कि जिसमें श्री महाप्रभुके नामको धव्वा न लगे।"

द० स्वामी दलाकटानन्द।

"यह पत्र १०-१२-१९०७ को उक्त श्रीमानको सेवामें रजिष्ट्री द्वारा भेजा गया था यदि इसका उचित उत्तर आता तो मैं अपनी समस्त पुस्तकें श्रीमान्को सेवामें विना मूल्य अर्पण कर देता परन्तु उत्तर न आनेसे ज्ञात हुआ कि इन कुरीतियोंका त्याग श्रीमान् को अभिष्ट नहीं है।"

"विषकीड़ा विष खात छोड़ छुहारा दाख फले।"

गोस्वामी गोवर्द्धनलाल जीने जब देखा कि व्लाकटानन्द ऐसे शान्त होनेवाला नहीं है तो उसको नगद रुपयोंको लालच दी ; इस विषयमें स्वामी व्लाकटानन्द ने अपनी पुस्तक "वल्लभकुल दम्भदर्पण नाटक" की तृतीय आवृत्तिमें गोस्वामी जी महाराजके नाम जो खुलापत्र छापा है उसमें लिखते है कि :—

"भगवन् ! आपने जो मुझ दीनके दरिद्र दैन्यको दूर करनेकी शुभाभिलाषासे ५००० मुद्रा देनेका प्रयत्न किया वह प्रशंसनीय होनेपर भी मेरे विषयमें दुःखका मूल है।"

इस रिश्वतखोरीसे भी जब गोवर्द्धनलालजी महाराज कामयाब न हुए तब स्वामी व्लाकटानन्दकी बनाई हुई पुस्तकें २०००) मूल्यकी अन्य व्यक्तियोंके द्वारा खरिद कर नष्ट करवा डालीं।

प्रिय वैष्णव बान्धवो ! आप जिन अपने गुरुओंको वेहद मान देते हैं, उनपर सर्वस्व न्योछावर करनेको तयार रहते है, उन गुसांइयोंके चाल चलन तथा मतके विषयमें कुछ विद्वानोंकी सम्मतियें जो इस पुस्तकमें लिखी हैं उसको पढ़कर अवश्य आपको आश्चर्य होगा। और आपके मनमें अवश्य यह विचार उत्पन्न होगा कि यदि वे सम्मतियें सच्ची हैं और वास्तवमें गुसांईलोग ऐसे ही धूर्त, पाखण्डी, अत्याचारी और व्यभीचारी हैं

तो अवश्य त्यागनेके तथा निन्दनेके योग्य हैं।

मित्रो! इस पुस्तकमें लिखी हुई सब बातें सची सी हैं औ इससे भी अधिक इनके मत तथा चाल चलन की सची बातें आपको बम्बईमें चले हुए "महाराज लायवलकेस" की रिपोर्टके पढ़नेसे ज्ञात होगी। सब मनुष्योंको उचित है कि,—

"सत्य ग्रहण करने और असत्यके छोड़-
नेमें सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।"

गुसांईजीसे प्रश्न उसका उत्तर और प्रत्युत्तर।

गत जौलाई मासमें श्रीनाथद्वारेके टिकैत श्रीगोवर्द्धनलालजी महाराज अपने पुत्र दामोदर लालजी सहित यहां कलकत्तेमें जगन्नाथ यात्राकर पधारे थे। उनसे जो मैंने प्रश्न किये थे, उसका उत्तर प० रामनारायणजी त्रिवेदीने छपवाकर प्रकाशित किये थे। सब लोगोंके अवलोकनार्थ यहां प्रत्युत्तर सहित प्रकाशित करता हूं।

प्रश्न—पुष्टिमार्ग (आपका मत) आस्तिक है वा नास्तिक वेदोंको मानते हैं वा नहीं?

उत्तर—पुष्टिमार्ग आस्तिक है। इस मार्गमें वेद ही मुख्य प्रमाण माना गया है श्रीवल्लभाचार्य्यने भी अपने निबन्ध में कहा है—

वेदा श्रीकृष्णवाक्यानि व्याससूत्रानि चैवहि ।
समाधि भाषाव्यासस्य प्रमाणं तच्चतुष्टय ॥

प्रतुत्तर—मित्र ! गुसाइयोंके मतमें हाथी की तरह चबानेके और दिखानेके दो प्रकारके दांत होते हैं। प्रश्नोंके समय यही बाते पेश करते हैं किन्तु आचरण इनके सर्वथा विरुद्ध करते हैं अच्छा ! यही बात है तो कृपा करके निम्न प्रश्नोंके वेद तथा श्रीकृष्ण और व्यास सूत्रोंमेसे किसीके प्रमाण दीजिये ।

(१) नित्य आठ आठ दफे झांकियें करनी नाटकोंकी तरह परदे उठाने और गिराने (२) शिष्य और शिष्यायोंको झूठन खिलानी (३) पराई औरतोंसे पैर पूजाने तथा एकान्त स्थानमें लेजाकर कानमें फूक मार कर तन, मन, धन गुसाई अर्पण करवाना (४) कृष्ण जैसे महात्माओंके स्वांग बनाकर सभाओंमें नाच नचवाने, क्या कोई बाप दादोंके भी स्वांग बनाकर सभामें नचवाता है (५) क्या कभी गुसांई लोग वेदादि शास्त्रोंका उपदेश शिष्यांको करते हैं वा कभी किसीको यज्ञोपवित भी धारण करवाते हैं? देखो शास्त्रकार आचार्य्य किसे बतलाते है :—

उपनीयतु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद्विजः ।
सकल्पंसरहस्यंच तमाचार्य्यं प्रचक्षते ॥

जो शिष्योंको यज्ञोपवीत दे, वेदोंको शाखाओं सहित पढ़ावे उसीको आचार्य्य कहते हैं।

प्रश्न—देखो पुष्टिमार्गके दश मर्म्मोंमें लिखा है कि "लोक लाज तथा वेदोंको त्याग कर गोपीश अर्थात् आचार्य्यके शरण आओ"।

उत्तर—वहां पाठ इस प्रकार है "लोक वैदिक त्याग शरण गोपीशको"। इसका भावार्थ यह है कि, लौकिक व्यवहारोंमें आसक्ति और वैदिक काम्य कर्मों को त्यागकर गोपीश अर्थात् परब्रह्मके शरण जाना। गोपीशका अर्थ परब्रह्म है आचार्य्य नहीं।

प्रत्युत्तर—कृपा करके वेदोंमें दिखला दीजिये कि परब्रह्मने कहां यह आज्ञा दी है कि, "हे मनुष्यो! लौकिक व्यवहार और वैदिक काम्य कर्मों को त्यागकर मेरे (परब्रह्मके) शरण आओ।"

प्रश्न—महाप्रभु (वल्लभाचार्य्य)ने निबन्धमें कहा है कि "जो हमारे मार्गमें आवेंगे अधर्म करेंगे और वेद निन्दा करेंगे तोभी नरकमें न जायेंगे किन्तु हीन कुलमें जन्म लेवेंगे।"

उत्तर—इससे यह अभिप्राय सिद्ध नहीं होता कि वेदनिन्दा करनेमें पातक नहीं होता, किन्तु नामका इतना महात्म्य होनेपर भी वेद निन्दा करनेसे हीन कुलमें जन्म होता है।

प्रत्युत्तर—नामके महात्ममें वेद निन्दाके उदाहरण

का क्या प्रयोजन ? स्मृतिकारोंने "नास्तिकको वेद-निन्दकः" वेदोंको निन्दा करनेवालोंको नास्तिक कहा है। सच तो यह है कि, पुष्टिमार्ग नास्तिक मत है इसमें आस्तिकता एवं वेदमर्यादाकी एक भी बात नहीं है और हीन कुल तो गुसाइयोंके मतमें हैं ही नहीं। अलीखान पठान, उसकी लड़की, तानसेन मुसलमान, चुहड़ा भंगी, वेश्यायों तकको तो गुसाइयोंने पावनकर शिष्य बनाये हैं।

प्रश्न—पुष्टिमार्ग मत वल्लभाचार्य्यने चलाया है, उसका जन्म सम्वत् १५३५में हुआ लिखा है जिसको आज ४२८ वर्ष होते है अतः यह सनातन कैसे ?

उत्तर—पुष्टिमार्ग वल्लभाचार्यने चलाया है यह कहना ठीक नहीं वह अनादि है क्योंकि वेद अनादि हैं। इस वास्ते वैदिक मार्ग जो हैं सभी अनादि हैं।

प्रत्युत्तर—क्या कहना ! शैव, शाक्त, वैष्णव, तान्त्रिक आदि सभी अनादि हैं क्योंकि, सब अपनेको वैदिक मतानुयायि ही कहते हैं।

मद्यं मांसंच मीनंच मुद्रा मैथुन मेवच।
एते पञ्चमकारा स्युर्मोक्षदाहि युगे युगे ॥
पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत्पतति भूतले।
पुनरुत्थाय वै पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥

आदि तांत्रिकोंके सिद्धान्त भी अनादि है और "वैदिकी

हिन्सा हिन्सा न भवति" सिद्दान्त भी अनादि है ? फिर क्यों पुराणोंमें शैवोंने वैष्णवोंकी और वैष्णवोंने शैवोंकी परस्पर निन्दा की है जबकि सभी अनादि हैं ?

इसके अतिरिक्त और जो जो प्रश्नोत्तर हुए हैं उसको अनावश्य और अतिविस्तार हो जानेके भयसे छोड़ दिया है।

प्राचिन कालमें भी विद्वानोंमें मतभेद रहा करते थे परस्पर विवाद भी हुआ करते थे, किन्तु वर्त्तमान समयकी भांति सठ नहीं थे। अबभी सबको उचित है, कि सत्यके निर्णयके लिये शास्त्र देखें परस्पर प्रेम-पूर्वक विवाद करें, तभी सत्यधर्मको पाकर मोक्ष मार्गको पासकेंगे। अन्यथा धूर्त गुरुलोग सदा हम-को अंधेरेमें रखकर अपना स्वार्थसिद्ध करते रहेंगे।

चरित्रभ्रष्ट गुसांइयोंकी लीलायें।

"१। गोस्वामी गोपेशजी महाराज कोटावालेको न जाने एकदिन क्या सूझी, कि जनाना भेषकर राजा साहबके मकानमें घुस गये, लेकिन पहरेवालेने पह-चानकर गिरफ़तार किया। ज्योंही कान पूंछ पकड़े घसीटे लाते थे कि, जंगीस्वामीने संगीनोंके बीचमें कैद किया। जब सवेरा हुआ, सारा शहर समाचार सुन दर्शनको आया सबने लम्बी लम्बी दण्डवत् कर

कहा "वर्षों खमा पृथ्वीनाथ। आच्छो रूप धर्यो है, धन धन राज" पीछे महाराज कोटाने इन्हें गुरु जान इनको जान बख्सी, कोटाधिपति बड़े दयालु राजा थे नहीं तो गोबर गणेशजीको लाल खांके लक्कटसे ऐसा बांधा जाता कि तमाम गोबर निकल जाता। फिटकारके मारे मिथ्या कृष्ण कोटासे कृष्ण मुख कर निकाले गये।।

२। ब्रजेशजी महाराज बम्बई निवासीको एक पारसलकी बहुमूल्य वस्तु चुरा लेनेके अपराधमें दो वर्ष की सख्त सजा हुई थी मगर अपीलसे पांच वर्ष मुकर्रर की गई।

३। गिरधारीजी महाराज जो दानघाटीके ऊपर गोवर्द्धन पर्वतपर रहते थे उनके जुलमसे वहां गौरवों ने उन्हें बरछियोंसे मार डाला इस वारदातको करीब डेढ़ सौ वर्ष हुए।

४। साठ वर्ष पहले गिरधरलालजी महाराज टम्मन गये थे वहां एक लाड़ बनियेके घर श्रीठाकुरजी की मूर्त्ति थी, उक्त गुसांईजी उस मूर्त्ति को जबरदस्ती उठाकर चल दिये, बनियेने यह अत्याचार वहांके मजिष्ट्रेटसे कहा, मजिष्ट्रेटने गुसांईजीको मूर्त्ति सहित गिरफतार कराया और मूर्त्ति लेकर इतनी मार लगवाई कि पूरण पुरुषोत्तम अवतार जानसे खेल गये।

५। सम्वत् १८९४ विक्रमीमें राज्य कोटासे झाल-

रापाटन बट गया था। इसके चन्द रोज बाद विठ्ठलेशजी महाराज झालरापाटन पधारे और वहांके राजाको प्रसादमें विष मिलाके खिला दिया, खाते ही राजा तुरन्त मर गया, राजाके कामदारों और पोलिटिकल रेजिडेण्टने गुसांईजीको गिरफतार किया खोपड़ी पर फटाफट उड़नेसे गुसांईजीने जहर देना कबूल किया, लेकिन यहांके अज्ञान वैष्णवोंने ऐसे पतित को जान बचानेको गवर्नर जनरलके पास डेप्यूटेशन भेजा लेकिन वहां उनका दण्डनीय होना करार पाया और कैद किये गये. आखिर गुसाईजी और उनकी स्त्री आदि सबकी बड़ी कुगतिकी गई, अन्तको गुसाई जीके जेल-खानेमें ही प्राणांत हुए ।

६। करीब ६० वर्षका अर्सा हुआ कि व्रजलालजी महाराज कच्छ गये उन्होंने लखपतके वैष्णवोंसे बड़ी जबरदस्ती करके भेट उगाही, फिर अभड़ासेमें गये वहां भी ऐसा ही किया यह समाचार उस समयमें कच्छके राजाने सुने तो पचीस सवार भेज नादिरशाह के से पोते जालिम गुसांई कब्बाकको कान पकड़ कच्छ को सर-हदसे बड़ी टो टो पिट पिटके साथ निकलवा दिया ।

७। पारसलकी बाबद कैद की सजाका मजा चखनेवाले हरीशजीके पालक पिता व्रजनाथजी महाराज ४० वर्ष पहले मांडवी गये थे उन्होंने वहां बड़े

कुकर्म किये, इस कारण वहांके वैष्णवोंने उन्हें वहांसे एकदम धक्के दिलवाके छपा मुख कर गीतलायाबारुढ़ कर निकाल दिया।

८। काशीवाले रणछोड़जी महाराज कच्छ मांडवी गये थे, वहां उन्होंने बड़ी अनीति की और भले मानसोंकी स्त्रियोंको बिगाड़ा. लोगोंने उनके यहां औरतोंका जाना बिलकुल बन्द किया, जब इन कुकर्मी जीकी करतूतें वहांके हाकिमको ज्ञात हुई तो उसने सं० १९१८में उनको निकाल देनेका हुकम दिया, गुसांई जी मांडवी छोड़ चले आये।

९। जैपुर महाराज पहले वैष्णव थे, इस कारण दो मन्दिर वहां गुसांई लोगोंके थे जिनमें राजकी तरफ का सन्मान था, सं० १९२२ में राजकी तरफसे वैष्णव धर्मकी परीक्षाके लिये कितने ही प्रश्न गुसांई वगैरह वैष्णव आचार्योंसे किये गये, तिन प्रश्नोंके उत्तर निरक्षर भट्टाचार्य्य गुसांईयोंसे कुछ न बन पड़े, इस लिये राजा रामसिंहजीने गोकुलचन्द्रमाजी और मदनमोहनजीके मन्दिरोंका खान पान बन्दकर सोंगा भट्टोंको निकल जानेका हुकम दिया, आखिर दोनों मन्दिरोंके गुसाइयोंको रो पीटकर निकलना ही पड़ा।

१०। वल्लभजी महाराजने एक अमीरजान वैश्याको पटराणी बनाया और राधाबाईके नामसे प्रसिद्ध किया,

सच है ब्रह्म सम्बन्धका और कुछ फल न सही तो इतना ही सही गोस्वामीका शरीर स्पर्श होनेसे नामका ही पलटा हो गया। इसी धरा धामकी नृत्य करनेवाली सदा सुहागिनके प्रेम बलिदान होके वल्लभजी महाराज संसारसे मूं छुपा गये, अपने पुत्र गोविन्दलाल व गोकुल नाथजीको छोड़ दिया, गोकुलके श्रीगोपाल भट्टजीने दया करके बुढ़ापा सुधार दिया और बिरादरीमें मिला दिया।

११। इनके पौत्र सर्वत्र सुयशी गोस्वामी देवकी नन्दनजी महाराजकी भी भूल चूक सुनिये, बीकानेरमें दूसरी बार पधार कर एक पतिहीना दीन विधवा डागा-ओंकी पुत्री उम्मानियोंकी बहू श्री रुक्मिणी बाईके संग अनंग रंग रच कर उनका पेट भर दिया और फिर काम वनमें जाय उसे खाली कर दिया। वृद्धावस्थामें एक सुन्दर ब्याह करके आप अपने कामकी दुलत्तियों से बचे और अपने यशकी रक्षा की और इसी कारण व्यभिचारी आचारी कहे जानेसे बचे। लोग यह पढ़के चित्तको समझ लें।

१२। उदयपुरके महाराणा भी असलसे वैष्णव हैं वैष्णवोंका बड़ा मन्दिर श्रीनाथजीका उदयपुरके राज्यमें है और श्रीनाथकी भेट उदयपुर राज्यके करीब २५ ग्राम हैं नाथजीके मन्दिरकी गद्दी पर गिरधरलाल

जो महाराज मालिक थे उन्होंने उदयपुरके दरबारका हुक्म न माना और पोलिटिकल एजण्टको रूबरू जो इकरार लिखे थे वे नहीं पाले इस वास्ते उदयपुरके दर्बारने फौजी मनुष्य भेज कर गिरधरलालजीको ईसवी सन् १८७६ की तारीख ६ मईको कैद कर लिया और उनको गद्दीसे पदभ्रष्ट कर मेवाड़से निकाल और उनकी जगह उनके लड़के गोवर्द्धनलालको बिठाया उदयपुरके राणा साहबके यद्यपि गिरधरलालजी गुरु थे परन्तु राजकीय आज्ञा भंग करनेके कारण ऐसी मौज उड़ानेवाला गुसांई एक पल भरमें साधारण आदमी बना दिया गया।

१३। यदुनाथ जी महाराजने सन् १८६१ की सालमें उनके व्यभिचारकी कलई खोलने और उनके अत्याचारोंका पाप घड़ा फोड़ने और उनके ढोंगकी पोल गवर्नमेंट तक उघाड़नेके बदले "सत्य प्रकाश" पर ५० हजारके हर्जानेकी नालिशको इस मशहुर मारूफ मुकद्दमेंका अन्त पैतालीस दिनकी बहसके बाद हुआ, गवर्नमेंटको भलिभांति ज्ञात हो गया कि "यदुनाथजी तथा और सब गुसांई व्यभिचारके कीड़े हैं और यदुनाथजीने जान बूझकर झूठी सौगन्धें खाई है वगैर?" आखिरको ५०, हजार रुपया खर्चके "सत्यप्रकाश"की चरण पादुकाओंमें उक्त गुसांई को भेंट करने पड़े और

कहना पड़ा कि "भूले-बनिया भांग खाई अब खाऊं तो राम दुहाई" इसके सिवाय अदालतमें झूठी सौगन्द खानेकी सजाके डरसे यदुनाथजीको तीन वर्ष तक हैदराबादके जंगलमें धूल फांकनी पड़ी. तब जान बची नहीं तो "गरमागरम चार चपाती और चमचे भर मांश (उर्द) की दाल चखनी पड़ती"।

१४। गोकुल उच्छवजी महाराजने एक ब्रजवासी की स्त्रीसे बड़ी अनीतिकी यह खबर उसके पतिने सुनी तो नंगी तलवार ले गुसांईजीका शिर काटनेको कटिबद्ध हुआ, गुसांईजीने पैरोंमें पगड़ी रक्खी और २०००० रुपये देनेका कौल किया परन्तु उस समय महाराजके घरमें चून तकको मिसल नथी रुपया कहांसे आवे तब यह करार हुआ कि महाराज परदेश जाकर रुपया जमा कर ब्रजवासीको दें और जबतक कुल रुपया न चुका देवे पगड़ी न पहरे।

१५। द्वारकानाथजी महाराजके काकाके लड़के ब्रजनाथजीका देहान्त होजानेपर उनकी स्त्री चन्द्रावली बहू द्वारकानाथजीके शामिल रही लेकिन (बड़ी पारसलकी मारनेवाले) सज़ायाफ़्ता ब्रजेशजीने अपने बाप द्वारकानाथ और चाची चन्द्रावली बहूजीकी निस्बत यह इलज़ाम लगाया कि इन दोनोंको दुष्ट कर्म करते हुए मैंने अपनी आंखोंसे देखा है जाम साहबने बापका

अत्याचार खास उसके सपूत पूत की जवानी सुनकर सच जान और द्वारकानाथ जीको बड़ी वेइज्जतीके साथ व्रजनाथजीके मन्दिरसे निकलवा दिया।

१६। बम्बईके विक्रमजी महाराजने मुसलमानी वेश्या रक्खी थी, उसको लेकर गुसांई जी पंढरपूर पधारे, वहां उसको विठलनाथजीके मन्दिर दर्शन कराने ले गये, वहां रण्डीने अपने भाईको आवाज दी। इससे वहांके ब्राह्मणोंने समझ लिया कि यह हिन्दु नहीं है, मुसलमान है फिर धक्के देकर बाहर निकाला, किन्तु विक्रमजी महाराज और जैराम नामक किसी पुरुषने बीचमें बाधा दी इससे उन दोनोंको भी धक्के मारकर मन्दिरसे बाहर निकाल दिया। इस बातको अनुमान २५ वर्ष हुए।" (वल्लभकुल चरित्रदर्पणसे उद्धृत)।

इस प्रकारके और भी अनेक मारके मौजूद हैं परन्तु स्थानाभावसे नहीं लिखे।

देवद्रव्यं गुरुद्रव्यं परदाराभिमर्षण।
निर्वाह सर्वभूतेषु विप्रश्चांडालउच्यते॥

जो विप्र (ब्राह्मण) देवधन, गुरुधन और परस्त्री गमन करता है तथा सब प्रकारके मनुष्योंसे (धनलेकर) निर्वाह करता है उसको शास्त्रकारोंने चांडाल कहा है। (भोले वैष्णवो यह सब दुर्गुण गुसाईयोंमें हैं वा नहीं यह ज्ञानदृष्टिसे देखो)

वेदोपदेश ।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छा-
श्वतीभ्यः समाभ्यः ॥ यजुर्वेद । अध्याय ४०।८

व्याख्या । "स, पर्यगात्" वह परमात्मा आकाशके समान सब जगद्में परिपूर्ण (व्यापक) है, "शुक्रम्" सब जगत्का करनेवाला वही है "अकायम्" और वह कभी शरीर (अवतार) नहीं धारण करता क्योंकि वह अखण्ड और अनन्त, निर्विकार है, इससे देहधारण कभी नहीं करता, उस से अधिक कोई पदार्थ नहीं है इसीसे ईश्वरका शरीर धारण करना कभी नहीं बन सका, "अव्रणम्" वह अखण्डैकरस अच्छेद्य, अभेद्य, निष्कम्प, और अचल है इससे अंशांशी भाव भी उसमें नहीं है, क्योंकि, उसमें छिद्र किसी प्रकारसे नहीं हो सकता "अस्नाविरम्" नाड़ी आदिका प्रतिबन्ध (निरोध) भी उसका नहीं हो सकता अतिसूक्ष्म होनेसे ईश्वरकी कोई आवरण नहीं हो सकता "शुद्धम्" वह परमात्मा सदैव निर्मल अविद्यादि जन्म, मरण, हर्ष, शोक, क्षुधा, तृषादि दोषोपाधियोंसे रहित है, शुद्ध की उपासना करनेवाला शुद्ध ही होता है, और मलिनका उपासक मलिन होता है, "अपाप-विद्धम्" परमात्मा कभी अन्याय नहीं करता क्योंकि वह सदैव न्यायकारी ही है "कविः" त्रैकालज्ञ, (सर्ववित्)

महाविद्वान् जिस की विद्याका अन्त कोई कभी नहीं ले सकता, "मनीषी" सब जीवोंके मन (विज्ञान)का साक्षी सबके मनका दमन करनेवाला है, "परिभूः" सब दिशा सब जगहसे परिपूर्ण हो रहा हैं, सबके ऊपर विराजमान है, "स्वयम्भूः" जिसका आदिकारण माता, पिता, उत्पादक कोई नहीं, किन्तु वही सबका आदि कारण है, "याथातथ्यतोऽर्थान्व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः" उस ईश्वरने अपनी प्रजाको यथावत् सत्य, सत्यविद्या जो चार वेद उनका सब मनुष्योंके परमहितार्थ उपदेश किया है उस हमारे दयामय पिता परमेश्वरने बड़ी कृपासे अविद्यान्धकारका नाशक, वेदविद्यारूप सूर्य्य प्रकाशित किया है और सबका आदिकारण परमात्मा है, ऐसा अवश्य मानना चाहिये ऐसे विद्यापुस्तक का भी आदिकारण ईश्वरको निश्चित मानना चाहिये विद्याका उपदेश ईश्वरने अपनी कृपासे किया है, क्योंकि हमलोगोंके लिये उसने सब पदार्थोंका दान किया है तो विद्यादान क्यों न करेगा सर्वोत्कृष्टविद्यापदार्थका दान परमात्माने अवश्य किया है तो वेदके विना अन्य कोई पुस्तक संसारमें ईश्वरोक्त नहीं है; जैसा पूर्ण विद्यावान् और न्यायकारी ईश्वर है वैसा ही वेदपुस्तक भी है अन्य कोई पुस्तक ईश्वरकृत वेदतुल्य, वा अधिक नहीं है अधिक विचार इस विषयका "सत्यार्थप्रकाश" और "ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका" में देखें।

लक्षित प्रेस, २५।१ए मछुआ बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता।

शुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१०	क्षत	संस्कृत
२	१६	झूट	झूठ
६	५	और	ओर
६	५	वैष्णवने	वैष्णव बने
१२	२	विग्रहमें	निग्रहमें
१२	१६	भस्म जावेगा	भस्म हो जावेगा
१४	१८	शिष्योंने	शिष्योंको
१५	१	सर्वसे	सबसे
२०	७	रखते है,	रखते हों,
२२	२२	ओर	और
२३	५	होगौं	होंगी

इसके अतिरिक्त भी छापेखानेकी असावधानीसे कई स्थलों पर अनेक अक्षरोंकी मात्रादि टूट गये हैं, कृपया पाठकगण सुधार लेवें ।